RNI No.: RAJBIL/2013/54153
U.G.C. Approved No. 64524

ISSN : 2322-0074

अलख दृष्टि

ALAKH DRISHTI

(भाषा, दर्शन, साहित्य, संस्कृति एवं मानविकी की संवाहिका त्रैमासिक शोध पत्रिका)

वर्ष-5 ● अंक-04 ● त्रैमासिक ● अक्टूबर-दिसम्बर, 2017

A Peer Reviewed Research Quarterly

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय	लेखक	पृष्ठ सं.
01.	विश्वसुन्दरी विश्वेश्वरी अन्नपूर्णा	प्रो. हरिशंकर पाण्डेय	06-10
02.	स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना (SGSY) का महिलाओं पर प्रभाव (अलवर-राजस्थान का एक अध्ययन)	डॉ. बिजेन्द्र प्रधान	11-15
03.	जैन धर्म में अनेकान्तवाद	मेवालाल चैतन्य	16-25
04.	आचार्य बच्चूलाल अवस्थी की 'प्रतानिनी' का स्थालीपुलाक पाकपरिशीलन	डॉ सत्यप्रकाश दुबे	26-33
05.	सम्राट अशोक का मूल्यांकन (पुरातात्त्विक आधार पर)	डॉ. समणी संगीत प्रज्ञा	34-38
06.	तुलसी के रामचरितमानस में नारी-चिंतन	शर्मिला सोनी	39-43
07.	Revisiting Gandhi	Dr Anil Dutta Mishra	44-51
08.	Learning and Teaching of English in Nagaur District: Problems and Solutions	Tripti Tripathi Dubey	52-57
	पुस्तक समीक्षा	डॉ पुष्पा मिश्रा	58

सम्राट अशोक का मूल्यांकन

(पुरातात्त्विक आधार पर)

डॉ. समणी संगीत प्रज्ञा

ऐतिहासिक तथ्यों को उद्घाटित करने में सम्राट् अशोक का मूल्यांकन अत्यावश्यक है। इस मूल्यांकन के आधार पर अशोक एक महान् सम्राट् सिद्ध होता है। वह भारतीय इतिहास का ही नहीं विश्व-इतिहास का एक आदर्श व महान् व्यक्तित्त्व वाला सम्राट् था। उसकी महानता उसके व्यक्तिगत चरित्र, उदात्त नैतिक आदर्श, मानवोचित गुण, अगाध धर्मपरायणता एवं समस्त मानवता के कल्याण के कार्यों के करने में था। उसने अपने आदर्शों से न केवल मानवता को सचेत किया अपितु उसका पालन भी किया। उसने अपनी नीति एवं महान् कार्यों से विश्व-इतिहास का मार्ग प्रशस्त किया और ऐसे आदर्शों को प्रस्तुत किया, जो आज भी अनुकरणीय है। अशोक के चरित्र का मूल्यांकन हम निम्न विशेषताओं के आधार पर कर सकते हैं-

1. महान् व्यक्तित्वः अशोक मानव रूप में देवता था और देवत्व उसके व्यक्तित्व का प्रमुख अंग था। कलिंग युद्ध के वीभत्स रूप से उसके हृदय में जो अन्तःनाद हुआ, उससे उसके व्यक्तित्व का समन्वित विकास हुआ। इससे हम उसके व्यक्तित्व में धर्मपरायणता[1], कर्तव्यपरायणता[2], सत्यनिष्ठा[3], सेवा[4], अहिंसा[5], त्याग[6], उदारता[7], पवित्रता[8], सहिष्णुता[9] व लोकहित-भावना[10] को वास्तविक रूप में देख सकते हैं। निस्सन्देह उसका व्यक्तित्व महान् था, जो नैतिकता व आध्यात्मिकता से अनुप्राणित था।

2. धर्मविजयी[11]: अशोक ने शान्ति और अहिंसा पर आधारित धर्म से मानवहृदय में जिस विशाल साम्राज्य को स्थापित किया, वह अद्वितीय था। कलिंग-युद्ध के बाद उसने युद्धविजय की नीति को त्याग दिया और धम्मविजय की नीति का अनुगमन किया। रणघोष के स्थान पर उसने धर्मघोष प्रारम्भ कर, धर्मविजय की ओर अग्रसर हुआ। यह धर्मविजय मानव-शरीर पर नहीं आत्मा पर थी, जो आत्मबल, प्रेमबल, शान्ति व अहिंसा के बल पर ही प्राप्त की जा सकती थी। अशोक ने इन शास्त्रों को धर्माचार्यों व धर्म-प्रचारकों के कन्धों पर रखकर न केवल भारत अपितु भारत के बाहर भी धम्मविजय की नीति का प्रचार किया। अशोक की यह धार्मिक, नैतिक व आध्यात्मिक विजय अपूर्व थी।

3. उदार एवं सहिष्णु : धर्म के क्षेत्र में वह उदारवादी, सहिष्णु व व्यापक विचार का व्यक्ति था। उसमें धर्म सम्बन्धी वैचारिक संकीर्णता नाममात्र भी न थी। उसका कथन था कि 'किसी भी स्थिति में दूसरे सम्प्रदाय का आदर करना, लोगों का कर्तव्य है। ऐसा करने से मनुष्य अपने सम्प्रदाय की अधिक उन्नति और दूसरे सम्प्रदाय का उपकार करता है। उसका विश्वास था कि वैचारिक संकीर्णता को त्यागने से सब सम्प्रदायों के सार की वृद्धि होगी। निस्सन्देह, अशोक की धार्मिक नीति सहिष्णु और व्यापक थी।

4. राष्ट्र-निर्माता : अशोक महान् राष्ट्र-निर्माता था। उसने भारत को राष्ट्रीय एकता के सूत्र में बांधने का प्रयास किया। देश में प्रचलित जनभाषा प्राकृत (पालि) को उसने राष्ट्रभाषा के रूप में अपनाते हुए, उसे सम्पूर्ण देश में प्रसारित किया जिससे राष्ट्र में भाषायी एकता की स्थापना हुई। ब्राह्मी लिपि का अखिल भारतीय स्तर पर प्रयोग करते हुए भी उसने अल्पसंख्यकों के लिए खरोष्ठी तथा यूनानी लिपियों के प्रयोग की भी पर्याप्त सुविधा दी। अशोक के प्रायः सभी प्रयास किसी क्षेत्र विशेष के लिए न होकर, अखिल भारतीय थे।

5. लोक-हितैषी : अशोक लोक-हितैषी था। उसने लोकहित के लिए अपना सब कुछ समर्पण कर दिया था। प्रजा के भौतिक सुख व समृद्धि के लिए उसने राजमार्गों का निर्माण करवाया, जिस पर छायादार व फलवाले वृक्ष लगवाए, कुएं, विश्रामगृह व धर्मशालाएँ बनवाई।[12] मनुष्य ही नहीं, पशुओं के लिए भी उसने चिकित्सालयों और औषधि-उद्यानों की व्यवस्था की।[13] इसके अतिरिक्त प्रजा की आध्यात्मिक उन्नति के लिए ध र्मदान, धर्मश्रवण, धर्ममंगल आदि की व्यवस्थाएँ करते हुए, धर्मस्तम्भ खड़े कराए व धर्ममहामात्रों की नियुक्तियाँ की।[14] वह प्रजा के इहलोक तथा परलोक दोनों के सुख की कामना करता था। उसने घोषणा की-"सभी प्रजा मेरी सन्तान है। जिस प्रकार मैं चाहता हूँ कि मेरी सन्तति इस लोक और परलोक में सब प्रकार की समृद्धि और सुख भोगे, ठीक उसी प्रकार मैं अपनी प्रजा की सुख-समृद्धि की भी कामना करता हूँ।"[15]

6. मानवतावादी : अशोक मानवतावादी था। मानवमात्र के कल्याण के लिए वह सदैव उत्सुक रहता था। उसका विचार था कि सर्वलोकहित से बढ़कर किसी का कोई भी दूसरा कर्तव्य नहीं है। उसने अपनी प्रजा के कल्याण के लिए ही नहीं अन्य पड़ोसी राज्यों की प्रजा के कल्याण के लिए भी कार्य किया था। द्वितीय शिलालेख में उल्लेखित है कि उसने "सब स्थान तथा जो सीमावर्ती राज्य हैं, जैसे-चोल, पाण्ड्य, सातियपुत्र, केरलपुत्र, ताम्रपर्णी तथा अन्तियोक नामक यवन राजा और जो उसके समीप सामन्त राजा हैं, उन सबके देशों में देवताओं के प्रिय ने दो प्रकार की चिकित्सा का प्रबन्ध किया है। मार्गों में मनुष्यों और पशुओं के लिए वृक्ष लगाए गए और कुएं खुदवाए गए हैं।" 'वसुधैव कुटुम्बकम्' ही उसके धर्म का आधार था। उसका मानवतावादी विचार उस युग के लिए ही नहीं, आज के लिए भी अत्यन्त उपयोगी है। वह उदारता की मूर्ति और मानवता का सबसे बड़ा पुजारी था तथा उसका धर्म मानव-धर्म के रूप में विश्व-विख्यात रहा है।

7. आदर्शवादी : अशोक एक आदर्शवादी सम्राट् था। उसने जीवन के प्रायः प्रत्येक क्षेत्र में महानतम आदर्शों का अनुकरण किया था। राजनीतिक क्षेत्र में उसने शांति, सद्भावना, मैत्री व युद्ध न करने जैसे आदर्शों को अपनाया, जो न केवल भारत अपितु समस्त विश्व के लिए हितकर थे। लोककल्याणकारी राज्य का जो आदर्श उसने सर्वप्रथम प्रस्तुत किया, वह बाद के लिए भी अनुकरणीय बन गया। सामाजिक क्षेत्र में उसने शांति, प्रेम, समानता, स्वतंत्रता, विश्वबन्धुत्व व जन-कल्याण के लिए जो आदर्श प्रस्तुत किए, वे अनेक दृष्टियों से उल्लेखनीय हैं। धार्मिक क्षेत्र में उसने जिस धार्मिक निष्ठा, उदारता, सहिष्णुता आदि का आदर्श प्रस्तुत किया, वह विश्व-इतिहास में अद्वितीय प्रतीत होता है।

8. सेवा-भाव-अशोक ने सेवा पर बहुत अधिक बल दिया है। अपने से बड़ों की सेवा को उसने धर्म बतलाया है इसीलिए त्रयोदश शिलालेख में अशोक ने माता-पिता के अतिरिक्त ब्राह्मणों और गुरुओं की शुश्रूषा अथवा सेवा को भी धर्म घोषित किया है। धर्म के सिद्धान्त के रूप में शुश्रूषा सभी धर्मों के लिए मान्य सिद्धान्त था।

9. महादानी : "मितसंथुत नातिक्यानं च वंभन समनानं चा साधु दाने"[16]- मित्र, परिचित, सम्बन्धी (ज्ञाति) तथा ब्राह्मण एवं श्रमणों को दान देना-साधु है, अर्थात् धर्म है। त्रयोदश शिलालेख में मित्र, परिचित, सहायक, जाति (ज्ञाति) और दास-भृत्य आदि के साथ उचित व्यवहार धर्म बताया गया है।[17] (मित संथुत सहायनातिकेषु दासभटकशिसम्यापटिपति)। चौथे शिलालेख में अपने धर्मानुशासन की सफलता पर प्रकाश डालते हुए, अशोक ने प्रज्ञापित किया है कि उनके धर्मानुशासन से प्राणियों का अवध, भूतों के प्रति अहिंसा, जाति (ज्ञाति) के लोगों के प्रति उचित व्यवहार, ब्राह्मण-श्रमणों के प्रति उचित व्यवहार, और माता-पिता तथा वृद्धों की सेवा का भाव व व्यवहार लोगों में वृद्धिंगत हो गया।[18] अतः अशोक ने पुनः धर्म के स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए कहा-"धर्मदान से बढ़कर कोई दान नहीं है-"नास्ति एदिशं दनं यदिशं ध्रमदन ध्रमसंस्तवे धमंसंविभगो ध्रमसंवंध।"[19] और धर्मदान यह है-तत्र एतं-दसभटकन। सम्मपटिपति मतपितिषु सुश्रुष मित्र संस्तुतअतिकनं श्रमणब्रभणन दन प्रणन अनरंभो" अर्थात् ऐसा कोई दान नहीं जैसा धर्मदान है, ऐसी कोई मित्रता नहीं जैसी धर्म संस्तुति, ऐसी कोई उदारता नहीं जैसा धर्म सम्बन्ध, दास और भृतकों के प्रति शिष्ट व्यवहार, माता-पिता की सेवा, मित्र, परिचित, ज्ञाति और ब्राह्मण-श्रमण को दान ये सब बातें अथवा कर्म साधु हैं। ये सब कर्म कर्तव्य हैं-'इदं साधु', इदं कर्त्तव्यम् (इमं सधु इमं कटवो), इस प्रकार आचरण करने से इहलोक और परलोक दोनों में-पुण्य व सुख प्राप्त किया जा सकता है।

10.अपरिग्रही : "पानानं अनारंभं साधु अपवियाता अपभंडता साधु[20]-प्राणियों की हत्या न करना अच्छा है, साधु है अर्थात् धर्म है, तथा अधिक संचय न करना और अधिक व्यय न करना भी अच्छा है-साधु है अर्थात् धर्म है। इन तीनों प्रकार के आचरण को साधु अथवा धर्म घोषित कर, उनका अशोक द्वारा एक साथ उल्लेख किया जाना अहिंसा की दृष्टि से विचारणीय है। हिंसा केवल सीधे शारीरिक घात में ही नहीं, अप्रत्यक्ष रूप से घात पहुँचाने में भी है। सीधे घात पहुंचाने को स्थूल हिंसा कहा जाएगा लेकिन अधिक संचय और अधिक व्यय के द्वारा जो मनुष्य जीवन-यापन करते हैं, वे अवश्य ही दूसरों का अंश अथवा भाग छीनकर ही अधिक व्यय व संचय करने में समर्थ होते हैं। परिणाम यह होता है कि अन्य व्यक्ति दरिद्रता में और निर्धनता में अनेक प्रकार से कष्ट प्राप्त करते हैं। यह कष्ट अथक संचय व व्यय की प्रवृत्ति वालों की देन है, जो अप्रत्यक्ष अथवा सूक्ष्म हिंसा है और इसलिए ही वह अधर्म है। अतः उक्त तीनों सिद्धान्तों को अहिंसा व्रत के लिए धर्म माना गया है।

11.संयमी- सप्तम शिलालेख (गिरनार) में अशोक ने कहा है कि जो **"विपुले तु पि दाने यस नास्ति सयमे भावसुधिता व कर्तृता व दढभतिता च निचा बाढ"**[21]-जो बहुत दान नहीं कर सकता, उसमें भी संयम, भावशुद्धि, कृतज्ञता और दृढ़भक्ति नित्य-आवश्यक है और इन भावों का उद्दीपन अथवा उदय मानव हृदय में तभी सम्भव है, जब वह अपने कर्मों पर ध्यान रखे और उत्कृष्ट होने का अहंकार त्याग दे। अतः तृतीय स्तम्भ लेख में अशोक ने कहा है कि मनुष्य अपने सद् कर्मों या कार्यों पर ही ध्यान देता है किन्तु अपने पापकर्म या बुरे कार्यों पर ध्यान नहीं देता। अतः मनुष्य को यह अवश्य देखना चाहिए कि पापगामीनि कर्म क्या है-क्योंकि **"इयं मे हिदतिकाये इयंमन में पालतिकाये"** यह मेरे इहलौकिक लाभ के लिए है-पारलौकिक कल्याण के लिए है।[22]

भावशुद्धि और संयम का अशोक ने उदाहरण प्रस्तुत किया है। द्वादश शिलालेख में अशोक ने प्रज्ञापित किया है कि वह स्वयं सब सम्प्रदायों (सव्र प्रषंडिमि), प्रव्रजितों (प्रव्रजितानि-साधु), गृहस्थों (ग्रहथनि) को विविध प्रकार से दान और आदर देकर, उनकी पूजा करता है। और इससे भी बढ़कर वह सब सम्प्रदायों की सारवृद्धि का अभिलाषी है।[23] सप्तम अभिलेख में परस्पर सौहार्द व समन्वय उत्पन्न करने की कामना से अशोक अपना मनोभाव प्रकट करते हुए कहता है कि -सब स्थानों पर सब धर्म के लोग बसें।[24]

13. साम्प्रदायिक सद्भाव-स्वयं साम्प्रदायिक उदारता का उदाहरण प्रस्तुत कर, अशोक ने लोगों को अपने धर्म की प्रशंसा और पर-धर्म की निन्दा से विरत रहने और

वाणी का संयम रखने का धर्मानुशासन आज्ञापित करते हुए कहा है कि जो अपने सम्प्रदाय की पूजा करता है और दूसरे सम्प्रदायों की निन्दा करता है, वह वस्तुतः अपने सम्प्रदाय को हानि पहुंचाता है इसलिए सब सम्प्रदायों की सारवृद्धि के लिए प्रयत्न किया जाना चाहिए-यही धर्म का सार है।[25]और यह तब ही सम्भव है, जब विभिन्न धर्मों के लोग एक दूसरे के धर्म की बातें सुनकर बहुश्रुत बनें, परस्पर समन्वय का यही मार्ग है। अतः समन्वय ("समयो वो सधु") को साधु अर्थात् धर्मघोषित किया गया है, जोकि सर्वहितकारी और लोकग्राही सिद्धान्त है।

14. आत्मपरिष्कारक-अपने धम्म के इन भावों का प्रचार-प्रसार करने में अशोक ने स्वयं बहुत प्रयत्न किया है। अष्टम शिलालेख में उसने बताया है कि उसने पूर्ववर्ती राजाओं की तरह आमोद-प्रमोद के लिए विहार-यात्रा करना छोड़ दिया था और वह धर्मयात्रा करने लगा था। इस यात्रा में वह जनपद के ब्राह्मण-श्रमण, वृद्धजनों का दर्शन करता था, दान व हिरण्य द्वारा उनके पोषण की व्यवस्था करता था। जनपद के लोगों से मिलता था और धर्म पर प्रश्न पूछकर उन्हें धर्म का आदेश-उपदेश (ध्रमनुशस्ति), दिया करता था। समस्त प्रजा का ध्यान रखने एवं सभी प्रकार से उनकी कुशलता के लिए अनेक प्रशासनिक अधिकारियों की नियुक्तियां की तथा रात-दिन उनके कल्याण के विषय में तत्पर रहता था। यही एक कुशल प्रशासक के लक्षण होते हैं कि वह अपनी प्रजा का अनुरंजन करे तथा उन्हें पुत्रवत् समझे।

15. गुणग्राही- उपरोक्त गुणों के साथ ही अशोक के चरित्र में अनेक गुणों का सम्मिश्रण भी था। प्रारम्भ से ही उसमें एक योग्य सेनानायक के गुण थे। उसने विद्रोहों का बड़ी कुशलता से दमन करते हुए, उनको दबाने में सफलता प्राप्त की थी। इसके साथ ही उसमें एक उच्चकोटि के शासक के भी गुण थे। अपने राजत्वकाल में उसने प्रजाहित में अनेकों प्रशासनिक सुधार किए। वह अपनी प्रजा के दुःख-निवारण व कल्याण के लिए दत्तचित्त था। वह अच्छा उपदेशक व धर्म-प्रचारक भी था। निस्सन्देह उसमें अनेक गुणों का सम्मिश्रण था। वह एक ही साथ कुशल सेनानायक, राजनीतिज्ञ, लोकहितैषी, धर्म-प्रचारक, उपदेशक व प्रशासक भी था। उसके धम्म के सभी लक्षण सर्वलोककल्याणकारी, और सभी वर्गों एवं धर्मों के लिए मान्य ही नहीं अनुकरणीय और अनुगमनीय थे। एक स्वस्थ, सुसभ्य, सुसंस्कृत, और परमार्थ में अर्थ समझने वाला समाज, धर्म के इन्ही सिद्धान्तों पर खड़ा हो सकता था और इसी कामना से प्रेरित होकर, अशोक धर्मपराक्रम करता रहा, जिसके साफल्य को उसने 'धम्मविजय' के नाम से अभिहित किया।

अशोक एक महान् सम्राट् था। धम्मविजय उसका एक महान् कार्य था। उसके महान् व्यक्तित्व एवं कृत्यों को देखते हुए, विश्व के अनेक इतिहासकारों ने उसका मूल्यांकन करने के तदनन्तर अपने विचारों का निष्कर्ष प्रस्तुत करते हुए, उसकी तुलना विश्व के श्रेष्ठतम सम्राटों से करने का प्रयास किया है। कुछ इतिहासकारों ने अशोक को रोमन सम्राट् कान्स्टैन्टाइन महान् की कोटि में रखा है तो किसी ने सम्राट् अकबर से उसकी तुलना की है।

इन सभी ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर सम्राट् अशोक के अनेक पक्षों पर तो प्रकाश पड़ता ही है साथ ही भारतीय इतिहास के उस उज्ज्वल काल का ज्ञान भी सर्वसाधारण को होता है। इस अध्याय का मुख्य उद्देश्य यही है कि भारतीय अतीत के पृष्ठों से उस महान् सम्राट् के कुछ तथ्यों को प्रस्तुत कर, भारतीय इतिहास को समृद्ध करते हुए वर्तमान संदर्भों में इसकी उपादेयता सिद्ध करना। ये सभी तथ्य चूंकि अभिलेखों के आधार पर प्रस्तुत किये गये हैं अतः इनकी प्रामाणिकता असंदिग्ध एवं अकाट्यप्राय है।

संदर्भ सूची -

1. चतुर्थ शिलालेख, गिरनार
2. षष्ठ शिलालेख, कालसी
3. वही
4. तृतीय शिलालेख, गिरनार
5. प्रथम शिलालेख, गिरनार
6. तृतीय एवं एकादश शिलालेख, गिरनार
7. द्वादश शिलालेख, गिरनार
8. वही
9. सप्तम शिलालेख, गिरनार
10. द्वितीय शिलालेख, गिरनार
11. त्रयोदश शिलालेख, गिरनार

12. सप्तम स्तम्भलेख, देहली-टोपरा
13. द्वितीय शिलालेख, गिरनार
14. पंचम शिलालेख, गिरनार
15. पंचम शिलालेख, गिरनार
16. त्रयोदश शिलालेख, गिरनार
17. वही
18. चतुर्थ शिलालेख, गिरनार
19. एकादश शिलालेख (शहबाजगढ़ी)
20. तृतीय शिलालेख, कालसी
21. सप्तम अभिलेख, गिरनार
22. तृतीय स्तम्भलेख
23. द्वादश शिलालेख
24. सप्तम शिलालेख
25. एकादश शिलालेख

विभागाध्यक्ष
प्राच्यविद्या एवं भाषा विभाग
जैन विश्वभारती संस्थान (मान्य विश्वविद्यालय)
लाडनूं - 341306 (नागौर) राज.

वार्षिक पुरस्कार की सूचना

अलख दृष्टि (त्रैमासिक) शोध-पत्रिका में जनवरी-मार्च, अप्रेल-जून, जुलाई-सितम्बर तथा अक्टूबर- दिसम्बर तक अर्थात वर्ष के सभी अंकों में प्रकाशित शोध लेखों में सर्वश्रेष्ठ शोध लेख का चयन कर **प्रो. (डॉ.) सोहनराज लक्ष्मी देवी तातेड़ जोधपुर शोध पत्र पुरस्कार से पुरस्कृत किया जायेगा।** पुरस्कार जाने माने शिक्षाविद, सिंघानिया विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति प्रो. (डॉ.) सोहनराज तातेड़ के अर्थ सौजन्य से दिया जायेगा। पुरस्कार राशि 2000/- रूपये है। सर्वश्रेष्ठ शोध लेख का चयन एक विशेष चयन प्रक्रिया के द्वारा किया जायेगा। यह वार्षिक पुरस्कार सर्वश्रेष्ठ शोधलेख को प्रति वर्ष दिया जायेगा।

सत्र 2016-17 के पुरस्कारों की घोषणा की जा चुकी है। **प्रथम पुरस्कार** जोधपुर के विद्वान **प्रो. सत्यप्रकाश दूबे** के लेख **"व्याकरणमहाभाष्य में विवेचित औषधि एवं चिकित्सा पद्धति"** एवं **द्वितीय पुरस्कार डॉ. मालती पी शर्मा** के लेख ***"Para Language and culture in communication and Pedagogy"*** को मिला है। दोनों विद्वान लेखकों को "अलख-दृष्टि" परिवार की तरफ से बधाई।

— मानद सम्पादक